



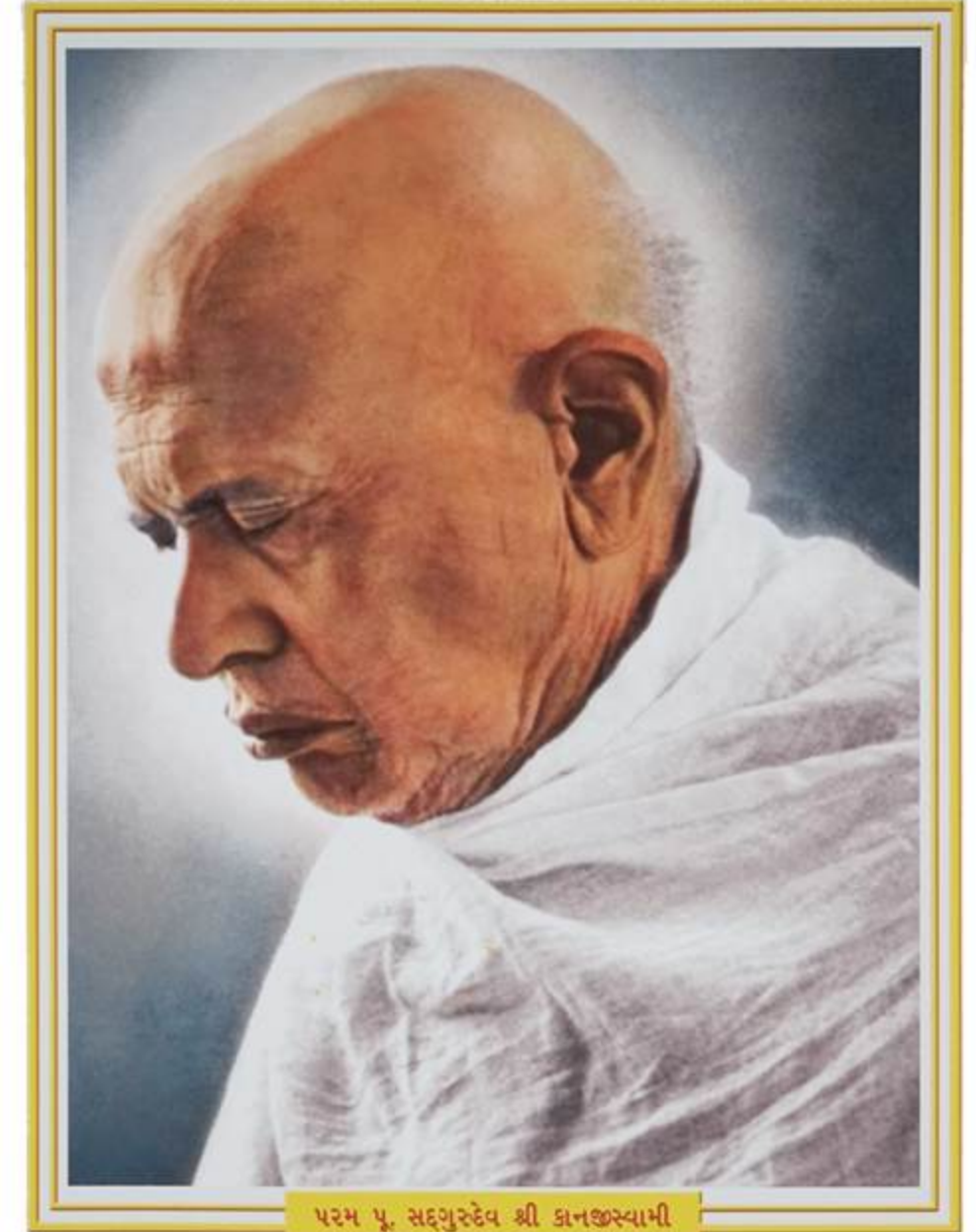
નમો અરિહંતાણં
નમો સિદ્ધાણં
નમો આચરિયાણં
નમો ઉવજ્ઞાયાણં
નમો લોએ સવ્વ સાહૂણં

મંગલં ભગવાન વીરો, મંગલં ગૌતમ ગણી
મંગલં કુંદકુંદાર્યો, જૈન ધર્મોસ્તુ મંગલં





कल्याणमूर्ति श्रीसद्गुरुदेवको
जिन्होंने इस पामर पर अपार उपकार किया है। जो स्वयं
मोक्षमार्ग में विचर रहे हैं और अपनी दिव्य श्रुतधारा
द्वारा भरतभूमि के जीवों को सततरूप से मोक्षमार्ग
दर्शा रहे हैं जिनकी पवित्र वाणी में मोक्षमार्ग के
मूलरूप कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शन का माहात्म्य
निरन्तर बरस रहा है और जिनकी परम कृपा से
यह ग्रन्थ तैयार हुआ है – ऐसे कल्याणमूर्ति
सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझानेवाले
कल्याणमूर्ति श्री सद्गुरुदेव को यह
ग्रन्थ अत्यन्त भक्तिभाव से
अर्पण करता हूँ.....
– दासानुदास रामजी



परम पू. सद्गुरुदेव श्री डा. न. ल. श्यामी



तत्त्वार्थसूत्र

अध्याय २, सूत्र १



औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्यस्वतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥

अर्थ - [जीवस्य] जीव के [औपशमिकक्षायिकौ] औपशमिक और क्षायिक
[भावौ] भाव [च मिश्रः] और मिश्र तथा [औदयिक-पारिणामिकौ च]
औदयिक और पारिणामिक, यह पाँच भाव [स्वतत्त्वम्] निजभाव हैं, अर्थात् यह
जीव के अतिरिक्त दूसरे में नहीं होते ।

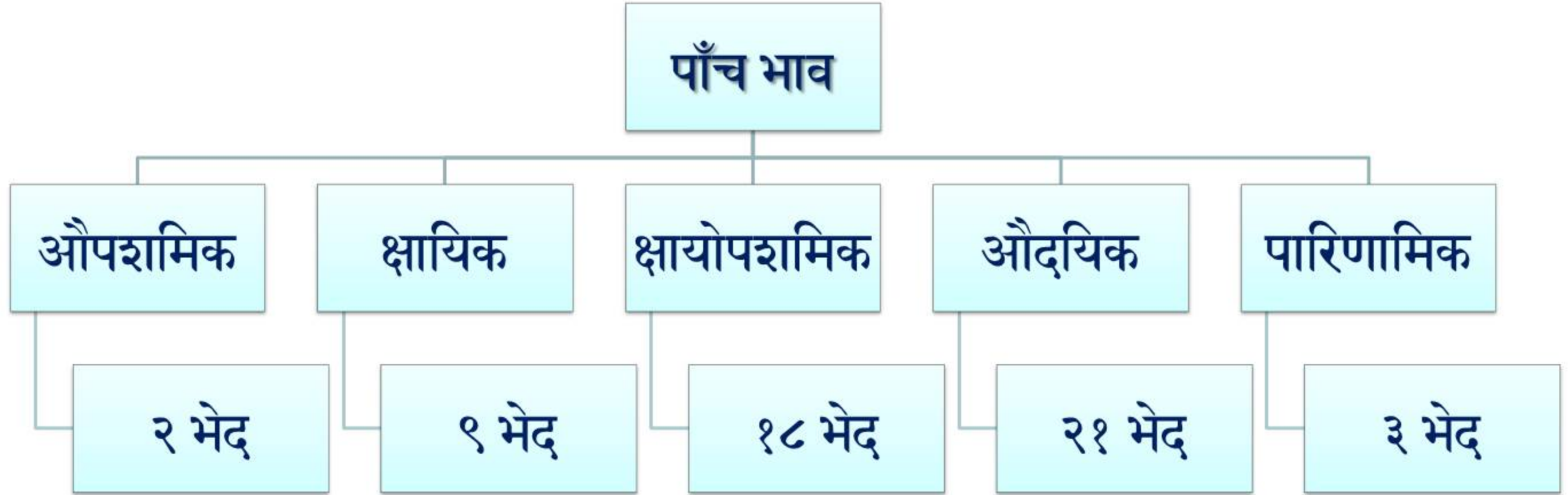


द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदाः यथाक्रमम् ॥ २ ॥

अर्थ - उपरोक्त पाँच भाव [यथाक्रमम्] क्रमशः [द्वि नव अष्टादश एकविंशति त्रिभेदाः] दो, नव, अट्ठारह, इक्कीस और तीन भेदवाले हैं।



द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदाः यथाक्रमम् ॥ २ ॥





सम्यत्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥

अर्थ - [सम्यत्त्व] औपशमिकसम्यत्त्व और [चारित्रे] औपशमिकचारित्र – इस प्रकार औपशमिकभाव के दो भेद हैं।

अध्याय २, सूत्र ३ - औपशमिकभाव के दो भेद



सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥





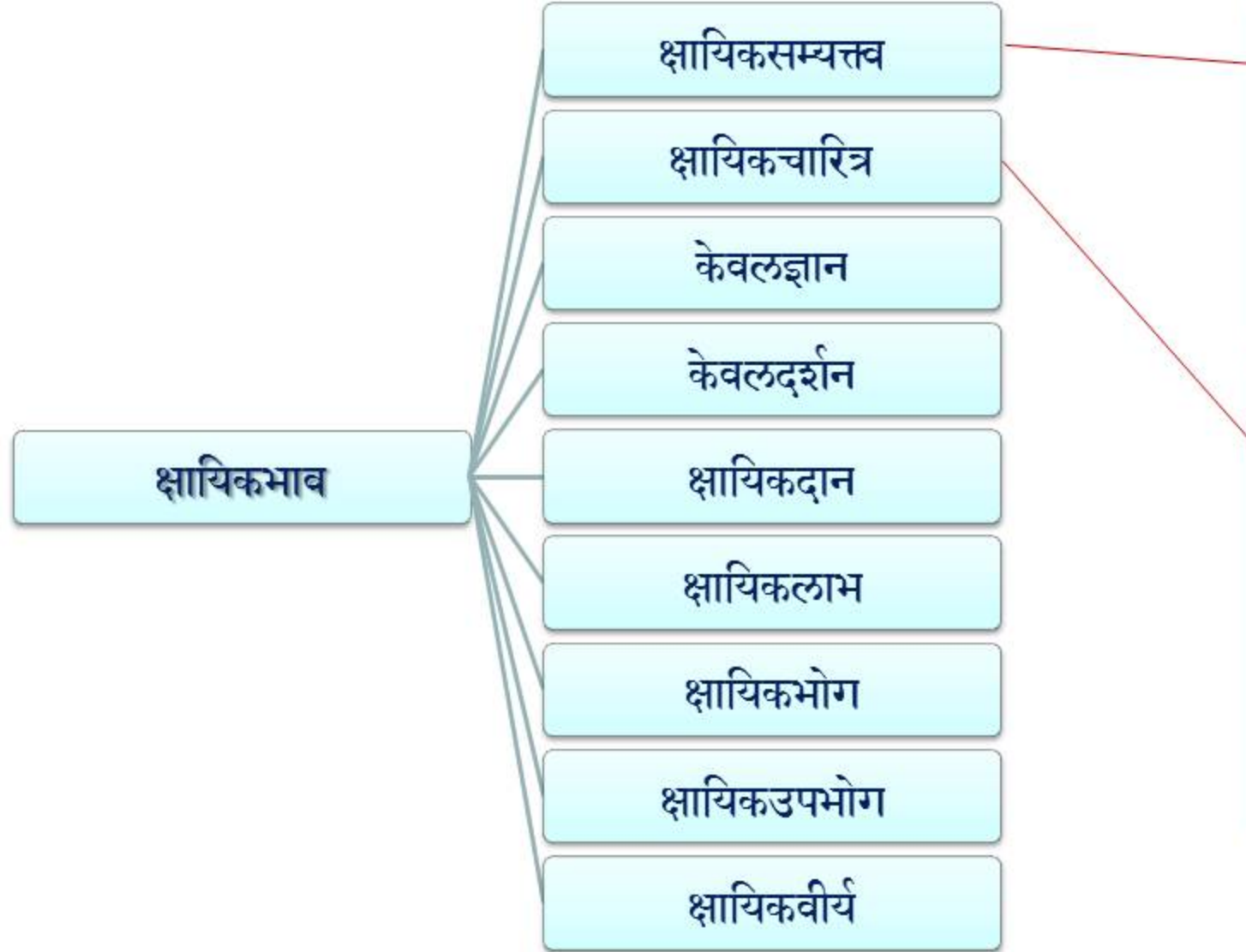
ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥

अर्थ - [ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि] केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिकदान, क्षायिकलाभ, क्षायिकभोग, क्षायिकउपभोग, क्षायिकवीर्य तथा [च] च कहने पर, क्षायिकसम्यक्त्व और क्षायिकचारित्र – इस प्रकार क्षायिकभाव के नौ भेद हैं।

अध्याय २, सूत्र ४ - क्षायिकभाव के ९भेद



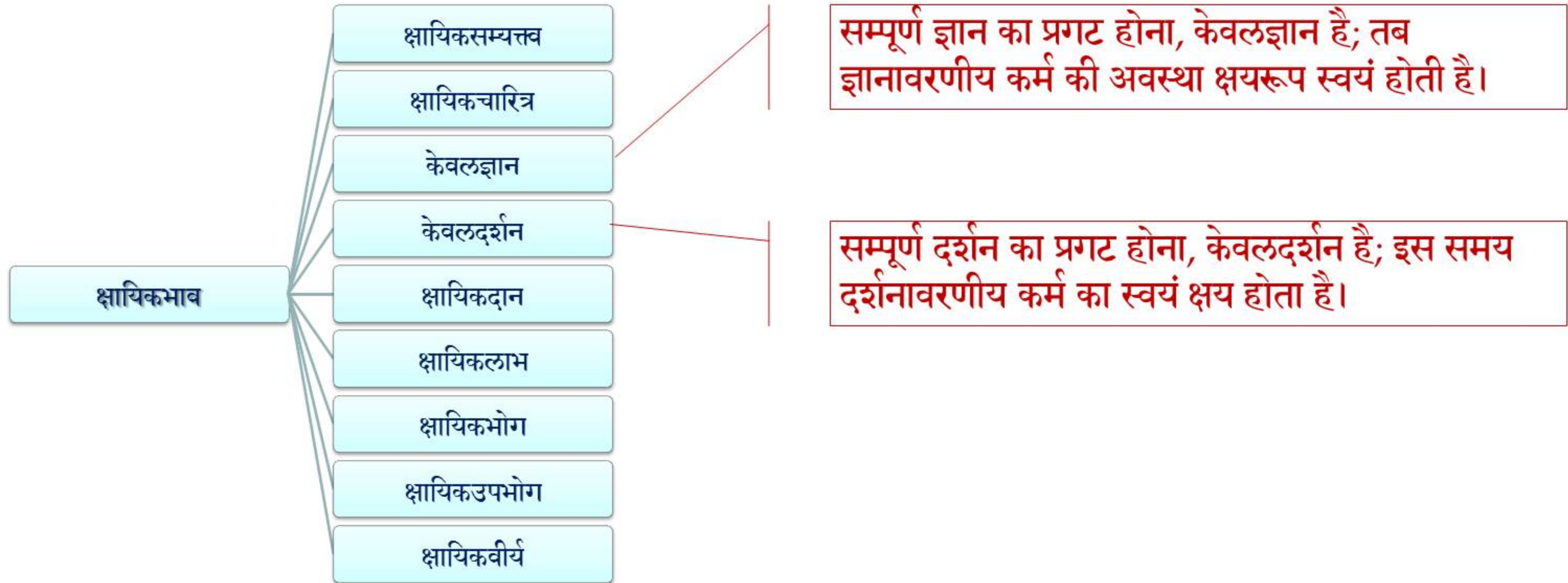
ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥ ४ ॥



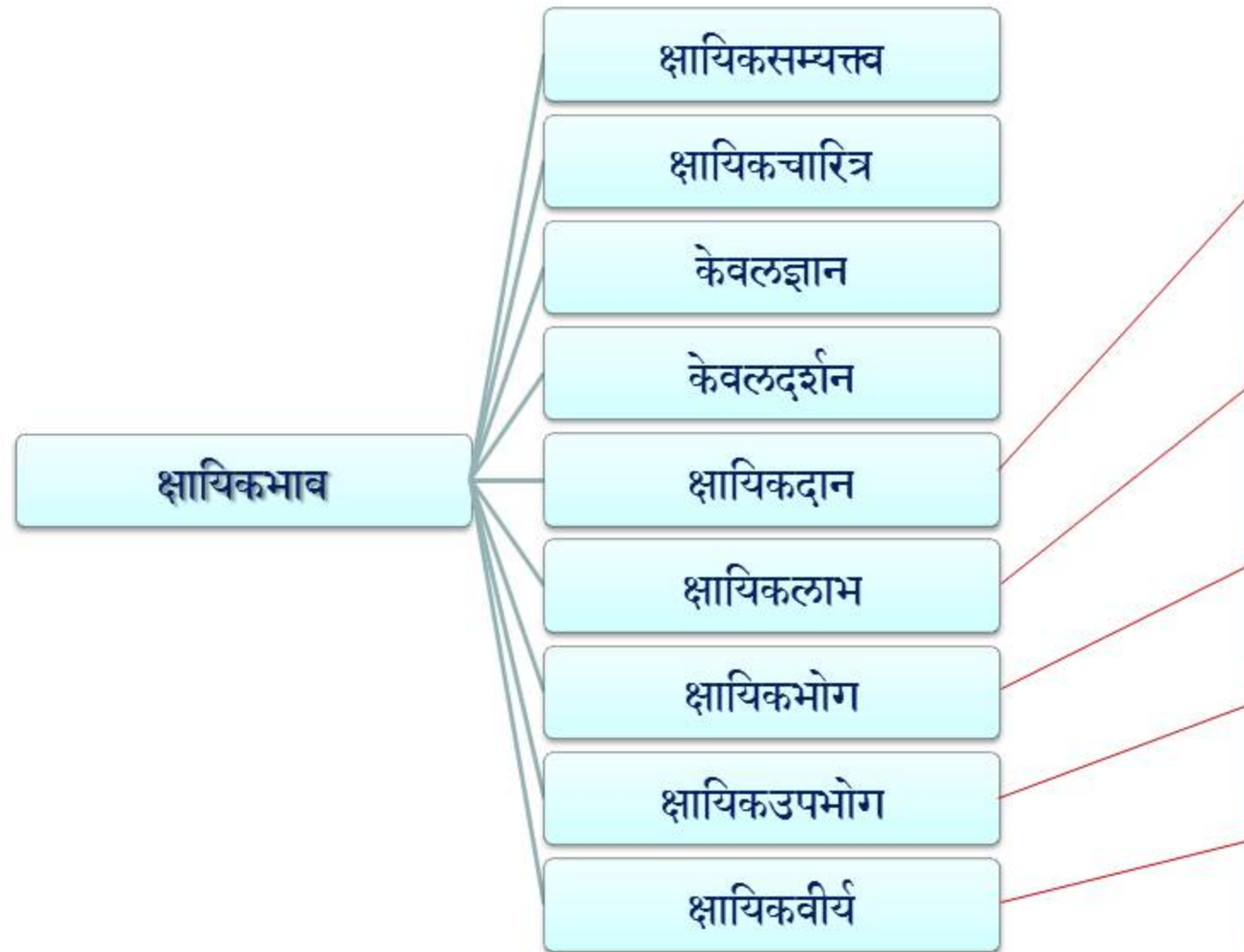
अपने मूलस्वरूप की दृढतम प्रतीतिरूप पर्याय, क्षायिक सम्यक्त्व है; जब वह प्रगट होती है, तब मिथ्यात्वकी तीन और अनन्तानुबन्धी की चार, इस प्रकार कुल सात कर्म-प्रकृतियोंका स्वयं क्षय होता है।

अपने स्वरूप का पूर्ण चारित्र प्रगट होना, वह क्षायिक चारित्र है। उस समय मोहनीय कर्म की शेष २१ प्रकृतियों का क्षय होता है। इस प्रकार जब कर्म का स्वयं क्षय होता है, तब मात्र उपचार से यह कहा जाता है कि “जीव ने कर्म का क्षय किया है”; परमार्थ से तो जीव ने अपनी अवस्था में पुरुषार्थ किया है, जड प्रकृति में नहीं।

अध्याय २, सूत्र ४ - क्षायिकभाव के ९ भेद



अध्याय २, सूत्र ४ - क्षायिकभाव के ९भेद



अपने शुद्धस्वरूप का अपने को दान देना, वह निश्चय क्षायिकदान है और अनन्त जीवों को शुद्धस्वरूप की प्राप्ति में जो निमित्तपने की योग्यता, वह व्यवहार क्षायिक अभयदान है।

अपने शुद्धस्वरूप का अपने को लाभ होना, वह निश्चय क्षायिक लाभ है और निमित्तरूप से शरीर के बल को स्थिर रखने में कारणरूप सूक्ष्म नोकर्मरूप अनन्त पुद्गल परमाणुओं का प्रति समय सम्बन्ध होना, क्षायिकलाभ है।

अपने शुद्धस्वभाव का भोग, क्षायिकभोग है और निमित्तरूप से पुष्पवृष्टि आदिक विशेषों का प्रगट होना, क्षायिकभोग है।

अपने शुद्धस्वरूप का प्रति समय उपभोग होना, वह क्षायिक उपभोग है और निमित्तरूप से छत्र, चमर, सिंहासनादि विभूतियों का होना, क्षायिक उपभोग है।

अपने शुद्धात्मस्वरूप में उत्कृष्ट सामर्थ्यरूप से प्रवृत्ति का होना, वह क्षायिकवीर्य है।

अध्याय २, सूत्र ५ - क्षायोपशमिक भाव के १८ भेद



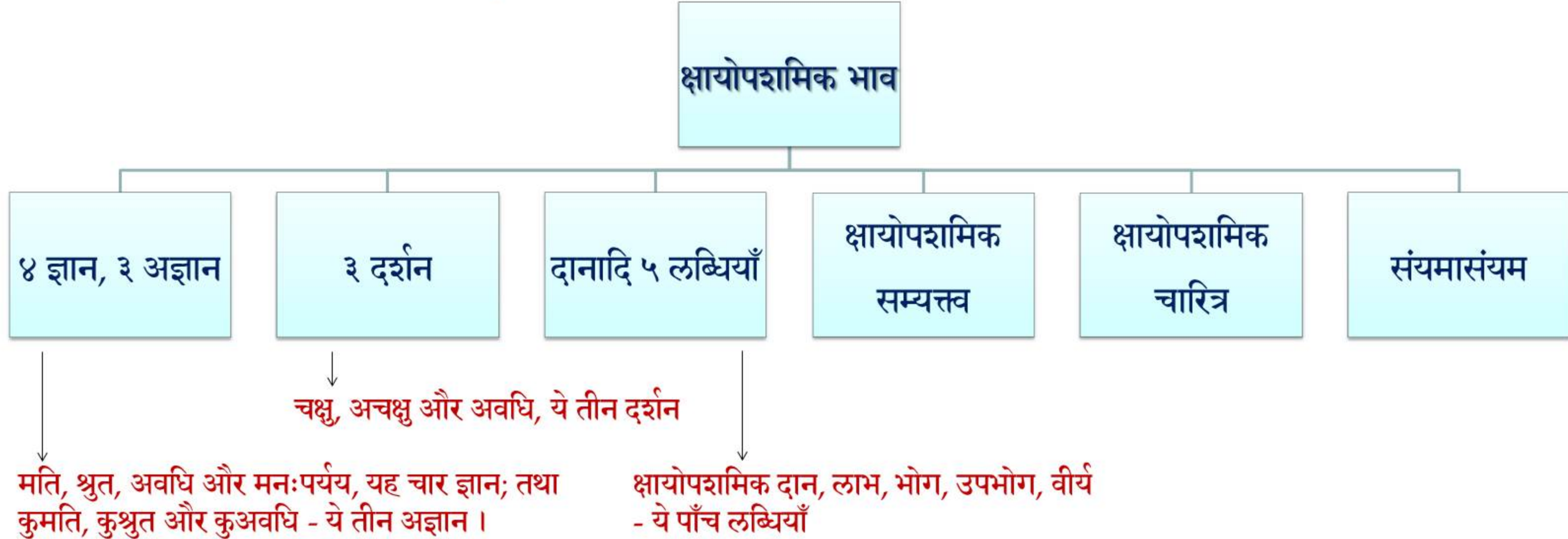
ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रिपंचभेदाः सम्यक्तत्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥

अर्थ - [ज्ञान अज्ञान] मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय, यह चार ज्ञान; तथा कुमति, कुश्रुत और कुअवधि – ये तीन अज्ञान [दर्शन] चक्षु, अचक्षु और अवधि, ये तीन दर्शन [लब्ध्यः] क्षायोपशमिकदान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य – ये पाँच लब्धियाँ [चतुः त्रि त्रिः भेदाः] इस प्रकार $4 + 3 + 3 + 5 = (15)$ भेद तथा [सम्यक्तत्त्व] क्षायोपशमिकसम्यक्तत्त्व [चारित्र] क्षायोपशमिकचारित्र [च] और [संयमासंयमाः] संयमासंयम – इस प्रकार क्षायोपशमिकभाव के १८ भेद हैं।

अध्याय २, सूत्र ५ - क्षायोपशमिक भाव के १८ भेद



ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥



अध्याय २, सूत्र ६ - औदयिकभाव के २१ भेद



गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्या-चतुश्चतुस्त्र्यैकैकैकषड् भेदाः ॥ ६ ॥

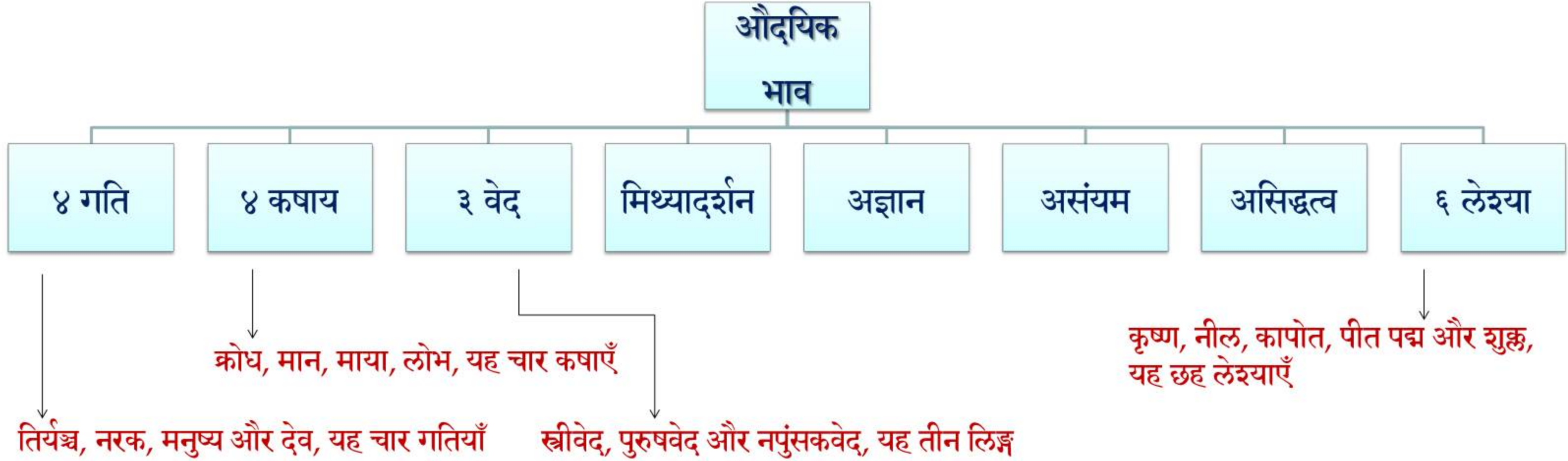
अर्थ - [गति] तिर्यञ्च, नरक, मनुष्य और देव, यह चार गतियाँ; [कषाय] क्रोध, मान, माया, लोभ, यह चार कषाएँ; [लिंग] स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद, यह तीन लिङ्ग; [मिथ्यादर्शन] मिथ्यादर्शन [अज्ञान] अज्ञान [असंयत] असंयम [असिद्ध] असिद्धत्व तथा [लेश्याः] कृष्ण, नील, कापोत, पीत पद्म और शुक्ल, यह छह लेश्याएँ – इस प्रकार [चतुः चतुः त्रि एक एक एक एक एक षड्भेदाः]

$4+4+3+1+1+1+1+6 = (21)$ इस प्रकार सब मिलाकर औदयिकभाव के २१ भेद हैं।

अध्याय २, सूत्र ६ - औदयिकभाव के २१ भेद



गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्या-चतुश्चतुस्त्र्यैकैकैकषड् भेदाः ॥ ६ ॥



६ लेश्या



लेश्या –

- कषाय से अनुरंजित योग को लेश्या कहते हैं
 - कृष्ण
 - नील
 - कापोत
 - पीत
 - पद्म
 - शुक्ल



अध्याय २, सूत्र ६ – औदयिक भाव के २१ भेद



गति –

प्रश्न:

गति, अघातिकर्मके उदय से होती है, जीव के अनुजीवीगुण के घात का यह निमित्त नहीं है, तथापि उसे औदयिकभाव में क्यों गिना है ?

उत्तर:

जहाँ मोहभाव होता है, वहाँ वर्तमान गति में जीव अपनेपन की कल्पना करता है, इसलिए तथा चारित्रमोह की अपेक्षा से गति को औदयिकभाव में गिन लिया गया है।

अध्याय २, सूत्र ६ – औदयिक भाव के २१ भेद



लेश्या –

- लेश्या के दो प्रकार हैं - द्रव्यलेश्या तथा भावलेश्या। यहाँ भावलेश्या का विषय है।
- ऐसा नहीं समझना चाहिए कि लेश्या के समय आत्मा में उस-उस प्रकार का रंग होता है।
- जीव के विकारी कार्य भावापेक्षा से ६ प्रकार के होते हैं, उस भाव में विकार का तारतम्य बताने के लिए छह प्रकार कहे हैं।
- भगवान के कषाय नहीं हैं, फिर भी योग के होने से एक समय का बन्ध है, यह अपेक्षा लक्ष्य में रखकर उपचार से शुक्ललेश्या कही गयी है।

अध्याय २, सूत्र ६ – औदयिक भाव के २१ भेद



अज्ञान –

ज्ञान का अभाव अज्ञान है , इस अर्थमें यहाँ अज्ञान लिया गया है; कुज्ञान को यहाँ नहीं लिया है, कुज्ञान को क्षायोपशमिकभाव में लिया है

जिनवाणी स्तुति



तीर्थकरो जगतना जयवंत वर्तो,
ॐकारनाद जिननो जयवंत वर्तो;
जिननां समोसरण सौ जयवंत वर्तो,
ने तीर्थ चार जगमां जयवंत वर्तो।

अहो! उपकार जिनवरनो, कुंदनो द्वनि दिव्यनो;
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते गुरु कहाननो।
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते भगवती मातनो।

